8/13B 8/13 B

❀ श्रीहरि ❀

श्रीमद्यामुनाचार्य मुनीन्द्र कृत

❀ आलवन्दार स्तोत्र ❀

स्तोत्ररत्न

(छप्पय छंदोंसहित)

LIBRARY
No. 24...
Shri Shri Ma Anandamayee Ashram
BANARAS
8/13B

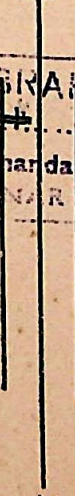

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

8/13B

❀ श्रीहरिः ❀

श्रीमद् स्वामी यामुनाचार्य कृत

आलवन्दार

(स्तोत्ररत्न)

पद्य भावानुवादक—

श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

प्रकाशक

संकीर्तन भवन, वंशीवट, वृन्दावन (मथुरा)

प्रथवार
२०००
चैत्र-कृ०९ । सं० २०२२

न्योछावर
२५ पैसा

पुस्तक प्राप्ति स्थान–

१– संकीर्तन भवन, बंशीवट, वृन्दावन (मथुरा)

१– संकीर्तनभवन, झूसी, (प्रयाग)

३– भागवत प्रेस, ८५२,मट्ठीगंज, प्रयाग

४– संकीर्तन भवन, बसन्त गाँव, मोतीबाग नं० १ पालम रोड नई देहली

५– भागवती कथा प्रचार कार्यालय, २३ सी, कैलास बोस स्ट्रीट कलकत्ता ६

६– भागवती कथा प्रचारक संघ १६।६६५८ देहली सराय रोहिल्ला नई देहली ५

७– सेठ जगत नारायण, भागवती कथा प्रचारक संघ,मऊ छीवो (जि० बाँदा)

पं– परमानंद पांडेय भागवती कथा प्रचार कार्यालय, मीठापुर, पटना

९– श्री अशोक मुनिजी, संकीर्तन भवन, लालपुर (जि० कानपुर)

नोट–हमारे यहाँ की प्रकाशित पुस्तकों की सूची कवर के अंतिम पृष्ठ पर देखें।

मुदक–राजाराम शुक्ल, संकीर्तन प्रेस, बंशीवट वृन्दावन

❀ श्री हरिः ❀ 4/12 B

प्रस्तावना

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः॥

दोहा--बार बार वन्दन करूँ, रमारमन पद ताहिँ।
कमला कर मरदित सतत,उन कर श्रीहिय माहिँ॥

छप्पय--श्री कमला के सहित श्याम सिंहासन सोहें।
छवि अति अनुपम युगल मदन-मुनि मन मथि मोहें॥
मुकुट चन्द्रिका मिलै लटनि सटि कच घुँघरारे।
अति चंचल वर चारि लोल लोचन अनियारे॥
प्रियभुज गर कर हिय धर्‌यो, मानों सालिगराम वर।
कनक सिँहासन सोह हीं, कमल नाल युत तिनि उपर॥

जीवन की सार्थकता आत्मसमर्पण में है, अपने प्रेष्ठ के लिये सब कुछ समर्पित कर देंना, कुछ भी शेष न रखना। प्रियतम हमारा जैसे चाहें उपयोग करें, जैसा चाहें बनालें, जैसा चाहें व्यवहार करें, अपनी ओर से कुछ कहने का अवसर ही न हो। इसी में जीव की सार्थकता है। भगवान् समस्त सद् गुणों के आलय हैं, समस्त वैभव के स्वामी हैं, उनकी भगवत्ता, रूप, लावण्य, शोभा सभी वर्णनातीत है।

यह जीव न जाने कब से भगवत् पादारविन्दों से पृथक् होकर भटक रहा है। अपने सीमित क्षुद्र अहंकार के वशीभूत होकर न जाने कैसे कैसे नीच कर्मों में प्रवृत्त होकर नाना भाँति के क्लेश उठा रहा है। जीव को भगवान् की परम महत्ता की अनुभूति होजाय और अपनी क्षुद्रता का ज्ञान होजाय तभी वह उनसे अपनी रक्षा के लिये स्तुति प्रार्थना विनय अथवा निवेदन करेगा। भक्ति भगवती का वाहन है नम्रता। जिसमें जितनी ही अधिक नम्रता होगी, उसकी भक्ति भी उतनी ही श्रेष्ठ मानी जायगी।

श्री वैष्णव संप्रदाय के संतों [आलवारों] तथा आचार्यों ने जैसा नीचानुसंधान किया है, वैसा अन्यत्र बहुत ही कम मिलता है। श्री संप्रदाय में महापुरुषों की पहुँचे हुए संत (आलवार) और जगत् शिक्षक आचार्य ये दो श्रेणियाँ हैं। जो सदा सर्वदा प्रभु प्रेम में ही निमग्न रहें, पारलौकिक उपासना में इतने संलग्न रहें कि उन्हें इस लोक का भान ही न रहे, उन्हें तो आलवार कहते हैं और जो शास्त्र के वचनों की संगति बैठावें स्वयं सदाचार का पालन करें, दूसरों से भी करावें, जो परलोक के साथ इहलौकिक कल्याण का भी ध्यान रखें, उनकी आचार्य संज्ञा है।

श्री सम्प्रदाय के पहुंचे हुए संतों में बहुत प्राचीन काल में श्रीमहामहिम श्रीशठकोप स्वामी हुए हैं, वे सदा सर्वदा भगवद् ध्यान में ही निमग्न रहते थे, सम्प्रदाय में उनका "प्रपन्नजन कुटस्थ" ऐसा विरुद है। उन्होंने सहस्रगीति आदि दिव्य प्रवन्धों की रचना की। उनको इतना तो अवकाश ही नहीं था,कि उनका प्रचार प्रसार करते। समाधि अवस्था में भगवत् प्रेरणा से जो हो गया सो हो गया, वे सदा सर्वदा भगवान् के ध्यान में ही निमग्न रहते थे।

इधर श्रीमन्नाथ मुनि स्वामी व्रजमंडल में गोवर्धन पर्वत पर रह कर योगाभ्यास करते हुए काल यापन करते थे। उन्हें योगारूढ़ दशामें ही श्री शठकोप स्वामी जीने सकल रहस्यार्थों का उपदेश दिया। उनकी इच्छा सदा सर्वदा भगवद् ध्यान में निमग्न रह कर व्रजवास करने की ही थी, किन्तु भगवत् प्रेरणा हुई कि तुम दक्षिण देश में जाकर दिव्य प्रवन्धों का संपादन तथा प्रचार करो।"

भगवत् आज्ञा शिरोधार्य करके श्रीमन्नाथमुनि दक्षिण गये। वहाँ उन्होंने आचार्यत्व का सकलकार्य सम्पन्न किया। दार ग्रहण करके एक आदर्श उपस्थित किया। उनके पुत्र हुए श्री

ईश्वर भट्ट स्वामी जी। इन श्री ईश्वर भट्ट स्वामी जी के ही पुत्र हुए श्री यामुनाचार्य स्वामी जी महाराज। इस प्रकार श्रीनाथ मुनि स्वामी इनके पितामह थे। यह तो श्रीमन्नाथ मुनि से इनका विन्दु सम्बन्ध था। दूसरा नाद सम्बन्ध भी था। श्री मन्नाथ मुनि के शिष्य थे श्री पुण्डरीकाक्ष स्वामी जो, उनके शिष्य हुए श्री राममिश्र स्वामी जी और श्री राम मिश्र स्वामी जी के शिष्य थे श्री श्री यमुनाचार्य जी। इस प्रकार श्री नाथ मुनि से इनका विन्दु तथा नाद दोनों ही सम्बन्ध थे। इसीलिये इन्होंने श्रीमन्नाथ स्वामी के प्रति अपनी अलौकिक अगाध श्रद्धा प्रकट की है। श्री संप्रदाय प्रवर्तक भगवान् रामानुजाचार्य ने भी इन्हें अपना परम गुरु करके माना है। महामुनीन्द्र यामुनाचार्यजी ने आचार्य प्रवर श्री रामानुज स्वामी की बड़ी ख्याति सुनी थी,वे उन्हें अपना सर्वस्व देने को परम समुत्सुक थे उनदिनों आचार्य श्री रामानुज स्वामी काञ्ची में विराजते थे और श्रीयामुनाचार्य जी श्रीरंगम् में। आचार्य यामुन स्वामी ने जब अपना अंतिम समय समीप समझा तब इनको काञ्ची से बुलवाया। स्थान दूर था, श्रीरामानुज स्वामी पहुँच नहीं सके, इसके पूर्व ही स्वामी जी परलोक प्रयाण कर गये। अचार्य ने जाकर देखा कि स्वामी यामुनाचार्य की तीन उँगली खड़ी हैं। उसी को अंतिम उपदेश समझकर आपने प्रतिज्ञा की जीव प्रकृति विशिष्ट ईश्वर इन तीनों का ही प्रति पादन करूँगा। विशिष्टाद्वैत के प्रचार की ये तीन उँगलियाँ ही उन्होंने आधार शिला मानीं।

श्री यामुनाचार्य स्वामी जी महाराज के वैसे तो संसार पर अनेकों उपकार हैं, किन्तु इस आलवन्दार स्तोत्ररत्न को रचकर तो उन्होंने हम जैसे पापपंकमें फँसे प्राणियों का बड़ा ही उपकार किया है। सचमुच यह स्तोत्ररत्न है। यद्यपि इसमें सब ६५ ही श्लोक हैं। किन्तु इन ६५ श्लोकों में ही उन्होंने

भगवद्भक्ति का सम्पूर्ण रहस्य भर दिया है। श्रीसम्प्रदाय के समस्त दिव्य देशों तथा मंदिरों में नित्य नियम से इस स्तोत्ररत्न का पाठ होता है। असंख्यों वैष्णव भक्त इसका नित्य नियम से पाठ करते हैं। अपनी वाल्यावस्था में पढ़ते समय मैं इस स्तोत्र को सुनता था, उस समय अर्थ समझने की क्षमता तो थी नहीं। जब सब विद्यार्थी मिलकर सस्वर इसका पाठ करते, तो इसकी लय मुझे अत्यंत ही प्यारी लगती। पीछे कथावाचकों से जब इसके श्लोकों की व्याख्या सुनी,तो मैं चकित होगया। एक दिन जब मैंने इस स्तोत्र का अंतिम श्लोक सुना "हे प्रभो ! आप मेरी नीचता की ओर न देखें। मेरी ओर देखेंगे तब तो मेरा उद्धार होने से रहा। आप मेरे पितामह श्रीमन्नाथमुनि की ओर देखें और इसी सम्बन्ध से मुझे अपनालें कि यह उन महामहिम स्वामी जी का पौत्र है।" इस विनय से मैं अत्यंत ही प्रभावित हुआ। एकबार मैंने इस स्तोत्र के श्लोकों को छप्पय वद्ध करना आरम्भ भी कर दिया। वहुत से श्लोकों की छप्पय बनाईं भी, किन्तु नाना प्रवृत्तियों में फँसे रहने के कारण पूरा न कर सका। वे छप्पय भी कहाँ पड़े रह गये, कुछ पता नहीं।

इधर जब कुंभ के अवसर पर प्रिय रामानुज पांडेय के आग्रह से भर्तृहरि शतक के तीनों शतकों को छप्पय बद्ध किया, तभी उन्होंने कहा—"ऐसे ही आलवन्दार स्तोत्रों को भी कर दीजिये।" भर्तृहरि शतक तो प्रिय जगदेव के कहने से आंरभ की थी,वह चला आया तो अधूरी ही रहगयी। कोई प्रेरणा करके करालेता है,तो हो जाता है,नहीं तो अधूरा ही रह जाता है। प्रयाग केकुंभ के पश्चात् जब यहाँ श्रीधाम वृन्दावन में आये और वंशी-वट संकीर्तन भवन को छोड़कर यमुना पार गोलोक में रहने लगे वहीं इच्छा हुई आलवन्दार स्तोत्र को छप्पय वद्ध करें। तभी तक रामानुज भी प्रयाग से यहाँ आगये। हमारे स्वामी जी श्री चक्र-

पाणि जी महाराज वेदान्ताचार्य जी ने भी आग्रह किया, पुस्तक लाकर दी। तो भगवत् प्रेरणा से और लेखक आचार्य की आन्तरिक भावना से दो दिन में ही ये ६५ श्लोक छप्पय बद्ध हो गये। कहाँ महामहिम अगाधबोध आचार्य यामुन, और कहाँ माया मोह में पतित वासनाग्रस्त मैं पामर प्राणी, कहाँ समाधि भाषा में उनका दिव्य स्तोत्र और कहाँ इधर उधर के शब्द जोड़ कर मेरी साधारण तुकबन्दी। काँच और मणिका अंतर है। फिर भी मेरे जैसे अल्पज्ञों के लिये जो संस्कृत से अनभिज्ञ हैं, उनके लिये रोने के लिये, गाने के लिये कुछ सहारा हो जायगा, इसीलिये मैंने ऐसा दुस्साहस किया है। यदि इससे मुझ जैसे अल्पज्ञों का कुछ भी उपकार हुआ, कुछ को भी श्रीस्वामी जी की भावना का आभास मिला, तो मुझे प्रभुकी इस तुच्छाति तुच्छ सेवा से यत्किंचित् संतोष होगा। मुनिवर श्री यामुनाचार्य कृत तो ये ६५ ही श्लोक हैं, किन्तु श्री संप्रदाय में पाठ करने की ऐसी प्राचीन परंपरा है, कि इस स्तोत्र के पाठ करने के पूर्व आचार्य वंदना के तीन श्लोक और बोल कर स्तोत्र पाठ करते हैं, और अंत में भी एक श्लोक बोलते हैं। हमने वे श्लोक स्तोत्र के आरंभ में मूल दे दिये हैं। उन तीन श्लोकों के आधार पर तीन छप्पय हम भूमिका में दिये देते हैं। एक बात ध्यान देने की है। कोई श्लोक दो पंक्तिका है। कोई चार पंक्तिका हमें छप्पय की ६ पंक्तियों में उसका भाव व्यक्त करना है, अतः कुछ अर्थ का विस्तार करना पड़ा। चेष्टा ऐसी की है कि मूल श्लोक के भाव की पूर्ण रक्षा हो, इसमें हमें कितनी सफलता मिली है इसे तो सुविज्ञ पाठक ही जान सकते हैं। अन्त में प्रभु के पाद पद्मों में पुनः पुनः प्रार्थना है कि वे हमारे अहं को चूर चूर करके उसे अपने पाद पद्मों के नीचे बिछालें और हमें अपना मानकर अपना लें।

छप्पय

(१)

जो सबकूँ दुरज्ञेय अरथ अति कठिन अगाधा।
गहन शास्त्र वेदान्त सुगम जिनि करयो आबाधा।
अति रूखो जो विषय ताहि स्वादिष्ट बनायो।
करि सुन्दर इस्तोत्र सबनिकूँ सुख पहुँचायो॥
यामुन आचरज प्रवर, जिनि को सुखकर नाम है।
तिनिके पद पाथोज में, पुनि पुनि पुन्य प्रनाम है॥

(२)

श्री यामुन पद पदुम नमें हम पुनि पुनि सबई।
तब कह लांयँ कृतज्ञ नमें हम पुनि पुनि जबई॥
श्रीरंगम नित बसहिँ करें पावन सब जगकूँ।
प्रभु प्रपत्ति परमार्थ बतावें ताके मगकूँ।
स्तोत्र रत्न जिनि ने रच्यो, आलवंदारहु नाम है।
तिनि यामुन आचार्य पद, पदुमनि अनँत प्रनाम है॥

(३)

श्री यामुन पद पदुम परागहु अतिशय पावन।
तिनि तें पावन बने हमारे गुरु मन--भावन॥
विदित निखिल वेदान्त जोग्य जानन के जो है॥
आत्मा को साक्षात् कार ई जगमें सो है।
तिनि गुरु वर पद पदुम में, पुनि पुनि पुन्य प्रनाम है।
प्रभु प्रापत्ति हित जिनिदयो, स्तोत्ररत्न जिहि नाम है॥

संकीर्तन भवन वंशीवट
वृन्दावन [मथुरा]
चैत्र कृ० ६ २०२२ वि

भगवत् भक्तों की चरणरज काअकिंचन
सेवक-
प्रभुदत्त

❀ श्रीहरिः ❀

श्रियै नमः ❀ श्रीधराय नमः

॥ श्रीमद्यामुन मुनये नमः श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्रीभगवद् स्वामी यामुनाचर्य कृत

⁂ आलवन्दार स्तोत्र ⁂

(स्तोत्ररत्न)

❋ आचार्य बन्दना ❋

(१)

स्वादयन्निह सर्वेषां त्रय्यन्तार्थं सुदुर्ग्रहम् ।
स्तोत्रयामास योगीन्द्रः तं वन्दे यामुनाह्वयम्॥

(२)

नमो नमो यामुनाय यामुनाय नमो नमः ।
नमो नमो यामुनाय यामुनाय नमो नमः ॥

(३)

नमो यामुन पादाब्ज रेणुभिः पावितात्मने ।
विदिताखिलवेद्याय गुरुवे विदितात्मने ॥

स्तोत्ररत्नम्

(१)

नमोऽचिन्त्याद्भुताक्लिष्टज्ञानवैराग्यराशये ।
नाथाय मुनयेऽगाधभगवद्भक्तिसिन्धवे ॥

(२)

तस्मै नमो मधुजिदंघ्रिसरोजतत्व-
ज्ञानानुरागमहिमातिशयान्तसीम्ने ।
नाथाय नाथमुनयेऽत्र परत्र चापि,
नित्यं यदीयचरणौ शरणं मदीयम् ॥

(३)

भूयो नमोऽपरिमिताच्युत भक्तितत्व-
ज्ञानामृताब्धिपरिवाहशुभैर्वचोभिः ।
लोकेऽवतीर्णपरमार्थसमग्रभक्ति—
योगाय नाथमुनये यमिनां वराय ॥

स्तोत्र रत्न (छप्पय)

(१)

भगवत् भक्ति अगाध सिन्धु वत जो वड़भागी ।
श्री श्रीनाथ मुनीन्द्र नन्दनन्दन अनुरागी ॥
राशि ज्ञान वैराग्य प्रकट साकार दिखायो ।
अति अचिन्त्य आचरज युक्त शुभ भाव जतायो ॥
भक्ति भावना तैं भरित, भक्त भरन जिनि नाम है ।
आचारज भूषन अमल, मुनि पद पदुम प्रनाम है ॥

(२)

बार बार पद नमन करूँ उन महामहिम के ।
उभय लोक आधार उभय पद दीन जननि के ॥
मधुजित चरन सरोज ज्ञान अनुराग सुसीमा ।
अतिशय अन्तिम रूप ताप नाशक भवभीमा ॥
अन्य शरन नहिं नाथ मुनि, जो अनाथ के नाथ हैं ।
चित तिनि चरननि शरन गहि, यामुन के पितु मात हैं॥

(३)

पुनि पुनि तिनि पद नमूँ नाथ मुनि प्रेम पयोनिधि ।
भगवद् भक्ति अगाध अमृत सागर जो सबविधि ॥
ताके पुन्य प्रवाह सरिस मङ्गलमय बचननि ।
परमारथ सब भक्ति होहि अवतरित सरस बनि ॥
करें प्रवरतित योगिजन, भक्ति जीव कल्यान हित ।
तिनि योगिनि के नाथ मुनि मन तिनि चरननि देहु चित॥

(४)

तत्त्वेन यश्चिदचिदीश्वरतत्स्वभाव—
भोगापवर्गतदुपायगतीरुदारः ।
संदर्शयन्निरमिमीत पुराणरत्नम्,
तस्मै नमो मुनिवराय पराशराय ॥

(५)

मातापितायुवतयस्तनयाविभूतिः,
सर्वं यदेव नियमेन मदन्वयानाम् ।
आद्यस्य नः कुलपतेर्वकुलाभिरामम्,
श्रीमत्तदङ्घ्रियुगलं प्रणमामि मूर्ध्ना ॥

(६)

यन्मूर्ध्नि मे श्रुतिशिरस्सु च भाति यस्मिन्,
अस्मन्मनोरथपथः सकलः समेति ।
स्तोष्यामि नः कुलधनं कुलदैवतं तत्,
पादारविन्दमरविन्दविलोचनस्य ॥

(४)

जिननें चित् अरु अचित परम ईश्वर स्वभाव वर ।
भोग और अपवर्ग बताये पथ उपाय वर ॥
अति उदार तपराशि ज्ञान के पुन्य प्रभाकर ।
रचि पुरान वर रत्न विष्णु जग करे उजागर ॥
मुनीश्वरनिमें श्रेष्ठतम, प्रनमों तिनि मुनि पराशर ।
मुक्ति युक्ति सिखई जिननि,व्यास जनक वासिष्ठ वर ॥

(५)

वैष्णव जन-पितु मातु पुत्र दारा सुविभूती ।
जिनि जग अति उपकार कियो रचि सहसहु गीती॥
जे प्रपन्न परिवार सबनि के सरबसु जो हैं ।
स्वामी श्री शठकोप उभय पद पंकज सो हैं ॥
वकुल कुसुम के सरिस वर, अति अभिराम महान हैं ।
तिनि मुनिवर पद पदुम में,पुनि पुनि पुन्य प्रनाम हैं॥

(६)

प्रभु पद पदुम प्रनाम करूँ पुनि ममसिर ऊपर ।
वेदनि के सिर रहें विराजित निखिल चराचर॥
आशा सकल प्रवाह जहाँ पूरन मिलि जावैं ।
कुल दैवत मम सतत दास कुल धन कहलावैं ॥
कमलनयन भगवान् के. उभय पाद अरविन्द की ।
इस्तुति माला रचहुँ हौं, उड़ै गंध मकरन्द की ॥

(७)

तत्त्वेन यस्य महिमार्णवशीकराणुः,
शक्यो न मातुमपि शर्वपितामहाद्यैः ।
कर्तुं तदीयमहिमस्तुतिमुद्यताय,
मह्यं नमोस्तु कवये निरपत्रपाय ॥

(८)

यद्वाश्रमावधि यथामति वाप्यशक्तः,
स्तौम्येवमेव खलु तेऽपि सदा स्तुवन्तः।
वेदाश्चतुर्मुखमुखाश्च महार्णवान्तः,
को मज्जतोरणुकुलाचलयोर्विशेषः

(९)

किं चैव शक्त्यतिशये ननु तेऽनुकम्प्यः,
स्तोताऽपि तु स्तुतिकृतेन परिश्रमेण ।
तत्र श्रमस्तुसुलभो मम मन्दबुद्धेः,
इत्युद्यमोऽयमुचितो मम चाब्जनेत्र ! ॥

(७)

सबकूँ करि परनाम फेरि अपने कूँ नमिहौं।
हौं कवि अति निरलज्ज सकल कवि मोकूँ छमिहौं॥
महिमा अमित अगाध पयोनिधि पार न पावें।
शेष शारदा शम्भु ब्रह्म कण कहत लजावें॥
देवदेव हू तत्त्व तैं, करि न सकैं महिमा बिमल।
हौं निरपत्रप तासु की, उद्यत इस्तुति करन भल॥

(८)

नेति नेति कहि बेद थके परि पार न पायौ।
हौं हूं इस्तुति करूँ यही मेरे मन भायौ॥
करत करत थकि जाउँ यथामति करत रहुंगो।
अज चतुरानन वेद थकैं हौं दास थकुज्ञो॥
अति विशाल सागर बिषै, डूबै अनु गिरिराज वा।
दोउनि की गति एक ई, फिर लज्जा मोकूँ कहा॥

(९)

कमलनयन भगवान मंदमति हौं कवि निरबल।
कृपापात्र बनि सकूँ नहीं कि शक्ति प्रबल खल॥
निरबल के बल तुमहिं सबनि तैं निरबल हौं प्रभु।
इस्तुति करि थकि जाउँ पतित पावन तुमहो विभु॥
मातु पिता शिशु थकित लखि, हिय लगाय किरपा करें।
त्यों मोकूँ अति उचित यह, लखि श्रम मम सिरकर धरें॥

(१०)

नावेक्षसे यदि ततो भुवनान्यमूनि,
नालं प्रभो ! भवितुमेवकुतः प्रवृत्तिः ॥
एवं निसर्गसुहृदि त्वयि सर्वजन्तोः,
स्वामिन्न चित्रमिदमाश्रितवत्सलत्वम् ॥

(११)

स्वाभाविकानवधिकातिशयेशितृत्वम्,
नारायण ! त्वयि न मृष्यति वैदिकः कः ।
ब्रह्मा शिवः शतमखः परमः स्वराडि-
त्येतेऽपि यस्य महिमार्णववि प्रुषस्ते ॥

(१२)

कः श्रीः श्रियः परमसत्वसमाश्रयः कः,
कः पुण्डरीकनयनः पुरुषोत्तमः कः
कस्यायुतायुतशतैककलांशकांशे,
विश्वं विचित्रचिदचित्प्रयिभागवृत्तम् ॥

(१०)

भगवन् ! कृपा कटाक्ष करें नहिं यदि करुनालय ।
होवैं नहिं सब भुवन नहीं पालन इस्थिति लय ॥
सब जीवनि के सहज सुहृद सरबसु तुम स्वामी ।
दीन जानिकें कृपा करें प्रभु अन्तरजामी ॥
भक्तवछल जग विदित तुम, वत्स तुम्हारे हम विभो ।
भक्तजननि वात्सल्यगुन, अचरजयुत नाहीं प्रभो ॥

(११)

हे नारायन ! महासिन्धु महिमा के कन सब ।
अज शिव शतमख इन्द्र अमर मुक्तात्मा मानव ॥
गावैं वेद पुरान सिमृति सब शास्त्र पुकारें ।
कहत कहत थकि जात पार नहिँ जाइँ बिचारें ॥
सीमातीत निसर्ग अति, विद्यमान ऐश्वर्य प्रभु ।
वैदिक ऐसो कौन जग, नतमस्तक नहिं होहि विभु ॥

(१२)

को है श्री को श्रेय मंगलनि मंगल को है ।
श्रेष्ठ सत्व को परम सुआश्रय जगमहँ को है ॥
कमलनयन भगवान परम अभिराम कहे को ।
पुरुषोत्तम जिनि विरुद भक्त पै कृपा करें को ॥
कांके शत शत सहस युत, कोटि भाग के अंश तैं ।
यह प्रपञ्च चित अचित मय, चलहिँ क्रमागत बंश तैं ॥

(१३)

वेदापहारगुरुपातकदैत्यपीडा—
द्यापद्विमोचनमहिष्ठफलप्रदानैः ।
कोऽन्यःप्रजापशुपती परिपाति कस्य,
पादोदकेन स शिवः स्वशिरोधृतेन ॥

(१४)

कस्योदरे हरविरञ्चिमुखः प्रपञ्चः,
को रक्षतीममजनिष्ठ च कस्य नाभेः ।
क्रान्त्वा निगीर्य पुनरुद्गिरति त्वदन्यः,
कः केन वैष परिवानिति शक्यशङ्कः ॥

(१५)

त्वां शीलरूपचरितैः परमः प्रकृष्टः,
सत्वेन सात्विकतया प्रबलैश्च शास्त्रैः ।
प्रख्यात दैव परमार्थविदां मतैश्च,
नैवासुरप्रकृतयः प्रभवन्ति बोद्धुम् ॥

(१३)

को अज शिवकूँ विपति वारि तैं पार लगावै ।
वेदनि को उद्धार करे को पाप छुड़ावै ।
विपति विमोचन करै कौन सुर रिपुनि भगावै ।
गुरुपातक अरु असुर विवादनि को निवटावै ॥
वर फल दाता और को, प्रजा पशुप पालन करें ।
तातैं हर निज जटामें, पादोदक धारन करें ॥

(१४)

कौन उदर महँ बसहिँ ब्रह्म हर प्रमुख जगत यह।
रच्चा सबकी करै जगत में ऐसो को वह ॥
नाभि कमलतैं भयो कौन की जग प्रपञ्च सब ।
कौनें नाप्यो निखिल निगलि को गयो सकलसब॥
कौनें उगिल्यो जगकर्‌यो, सब सनाथ कौनें करे ।
प्रभुवर तुमकूँ छोड़िकें, चित न अपर शंका धरे ॥

(१५)

शील रूप गुन चरित सबनितैं श्रेष्ठ कहावैं ।
सात्विक सगरे शास्त्र प्रबल वर अधिक बतावैं ॥
दैव तत्व परमार्थ विज्ञ जो संत कहावैं ।
वेऊ दै दै उक्ति तत्व पर तुमहिँ जतावैं ॥
असुर प्रकृति के खलपुरुष, इतने पैहू हे दयित ।
तुमकूँ जानन में नहीं, ये समरथ आचरज अति॥

(१६)

उल्लङ्घितत्रिविध सीम समातिशायि
सम्भावनं तव परिब्रढिमस्वभावम् ।
मायावलेन भवतापि निगूह्यमानम्,
पश्यन्ति केचिदनिशं त्वदनन्यभावाः ॥

(१७)

यदण्डमण्डान्तरगोचरं च यत्—
दशोत्तरण्यावरणानि यानि च ।
गुणाः प्रधानं पुरुषः परं पदम्
परात्परं ब्रह्म च ते विभूतयः ॥

(१८)

वशी वदान्यो गुणवानृजुः शुचिः,
मृदुर्दयालुर्मधुरः स्थिरः समः,
कृती कृतज्ञत्वमसि स्वभावतः,
समस्त कल्याणगुणामृतोदधिः ॥

(१६)

सबकूँ दीसत नाहिँ योग माया तैं छिपिकें।
देश काल अरु वस्तु रहौ नहिँ इनितैं घिरिकें॥
कोइ न आपु समान अधिक तो होहि कहाँ तैं।
लुकि छिपि के नित रहो फिरैं मन बुद्धि जहाँतैं॥
जो अनन्य तव शरन हैं, इतने पै हू भक्तजन।
कोई लखैं प्रपन्न बनि, तिनिको तव पद सतत मन॥

(१७)

अगम अपार विभूति विश्वब्रह्माण्ड बनावें।
सबमें न्यारे देव अधीश्वर सकल कहावें॥
दस-दस गुनआवरन तीन गुन प्रकृति जीवगन।
परपद श्रीवैकुण्ठ परात्पर ब्रह्म मुक्तजन॥
परमदिव्य मंगल विभव, विग्रह सुखप्रद दिव्य अति॥
सब विभूति तुमरीं प्रभो, तव पद पदुमनि रहे मति॥

(१८)

हो स्वभाव तैं वशी आश्रितनि वशमें प्रभुवर।
अतिउदार गुनवान सरल शुचि सुन्दर सुखकर॥
अति दयालु मृदु मधुर सदा थिर सम धीरजधर।
करि नित नव उपकार कृती हो तुम विश्वम्भर॥
अति कृतज्ञ कहँ तक कहैं, सकल गुननि की खान हैं।
अमृत रूप गुन उदधि हैं, गुननिधान भगवान हैं॥

(१६)

उपर्युपर्यब्जभुवोऽपि पूरुषान्,
प्रकल्प्य ते ये शतमित्यनुक्रमात्।
गिरस्त्वदेकैक गुणावधीप्सया,
सदास्थिता नोद्यमतोऽतिशेरते ॥

(२०)

त्वदाश्रितानां जगदुद्भवस्थिति-
प्रणाशसंसार विमोचनादयः ।
भवन्ति लीलाविधयश्च वैदिकाः,
त्वदीय गम्भीर मनोऽनुसारिणः ॥

(२१)

नमो नमो वाङ्मनसातिभूमये,
नमो नमो वाङ्मनसैकभूमये ।
नमो नमोऽनन्तमहाविभूतये,
नमो नमोऽनन्तदयैकसिन्धवे ॥

(१९)

तव गुन अगम अपार वेद हू पार न पावैं ।
जड़ चेतन नर देव ब्रह्म क्रम क्रम करिगावैं ॥
पुरुषवान अज कलपि शतगुने सकल बताये ।
तव गुन जानन अड़े नहीं आगे बढ़ि पाये ॥
मीमांसा करिबो अलग, नहिँ पगहू आगे बढ़े ।
उपक्रम करि करि कें थके,नेति नेति कहि-कहि खड़े॥

(२०)

नहिँ तुमकूँ करतव्य भक्तहित सकल करत हो ।
करि जग को संहार रचो फिरि तुमहिँ भरत हो॥
भक्तनि हित अवतार लेउ जग सीख सिखाओ ।
भक्त करें आचरन तिनहिँ विधि वेद बनाओ॥
भक्तनि तुम आश्रित रहो, भक्तनि के सरबसु तुमहिँ ।
भक्त काज अनुसरन करि,विश्व वेद सब कछु रचहिँ॥

(२१)

नमो नमो हे देव ! बाक मन गोचर नाहीं ।
नमो नमो हे देव ! वाक मन तैं ही पाहीं ॥
वानी मन अरु प्रान करन आत्मा तें आत्मा ।
अन्तर वाहर करन परे वेई परमात्मा ॥
हे असीम ऐश्वर्य युत, बार बार बन्दन करूँ ।
अखिल दया के सिन्धु प्रभु,पुनि पद पदुमनिमेंपरूँ॥

(२२)

न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी,
न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे ।
अकिञ्चनोऽनन्यगतिः शरण्य,
त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये ॥

(२३)

न निन्दितं कर्म तदस्ति लोके,
सहस्रशो यन्न मया व्यधायि ।
सोऽहं विपाकावसरे मुकुन्द !
क्रन्दामि संप्रत्यगतिस्तवाग्रे ॥

(२४)

निमज्जतोऽनन्त भवार्णवान्तः,
चिराय मे कूलमिवासि लब्धः ।
त्वयापि लब्धं भगवन्निदानीम्,
अनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥

(२२)

धरमनिष्ठ नहिं नाथ ! आत्मज्ञानी हू नाहीं ।
भक्ति भावना नहीं प्रभो पद पदुमनि माहीं ॥
सब विधि साधन शून्य अकिंचन नाथ कहाऊँ।
रक्षक अन्य न लखूँ शरन काकी प्रभु जाऊँ॥
शरन जगत में और नहिं, सरनागत वत्सल विभो ।
चरन शरन तुमरी लई, पार लगाओ अब प्रभो ॥

(२३)

कोई निन्दित करम जगत में ऐसे नाहीं ।
सहस सहस हठि बार करे जो मैंने नाहीं ॥
हे मुकुन्द भगवान समय पकिवे को आयो ।
फल अब उनिको मिलै नाथ हौं अति घबरायो॥
रक्षक कोई नहिं लखूँ, तुम दीननि के दुख हरो ।
रोऊँ कलपूँ दीन ह्वै, स्वामिन् अब रक्षा करो ॥

(२४)

तुम दयालु हो सहज दया के खोजत पात्रनि ।
कैसे हौं कहि सकौं नाथ निज भारी विपतिनि॥
भव निधि अनत अपार प्रभो डूबत हौं पापी ।
तट सम तुम अब मिलै बहुत भटक्यो संतापी ॥
तुम कूँ ऐसो कहँ मिलै, दया अनुत्तम पात्र वर ।
आश्रय तुम सम अपर नहिं, केवट केशव विपतिहर ॥

(२५)

अभूतपूर्वं मम भावि किं वा,
सर्वं सहे मे सहजं हि दुःखम् ।
किन्तु त्वदग्रे शरणागतानाम्,
पराभवो नाथ ! न तेऽनुरूपः ॥

(२६)

निरासकस्यापि न तवादुत्सहे,
महेश ! हातुं तव पादपङ्कजम् ।
रुषा निरस्तोऽपि शिशुः स्तनन्धयो,
न जातु मातुश्चरणौ जिहासति ॥

(२७)

तवामृतस्यन्दिनि पादपंकजे,
निवेशितात्मा कथमन्यदिच्छति
स्थितेऽरविन्दे मकरन्दनिर्भरे
मधुव्रतो नेक्षुरकं हि वीक्षते ॥

(२५)

ऐसी कोइ न विपति सतत जो नहीं सहीं हैं।
जनमीं सँगई विपति काहु तैं नहीं कहीं हैं॥
कहिबे तैं का लाभ सहीं अबतलक सहुंगो
कहीं न लोगनि निकट न आगे प्रभो कहुंगो॥
शरनागतवत्सल विरुद, शरन लई तव चरन अब।
शरन पर्‌यो दुख पाइ यदि, हँसी होइगी नाथ तव॥

(२६)

जानि मोइ निरलज्ज नीच यदि पगतैं ताड़ौ।
मेरे पापनि निरखि पास तैं मोइ निकारौ।
तऊ न पद तजि जाउँ और आश्रय जग नाहीं।
जैसे तैसे पर्‌यो रहूं पद पदुमनि माहीं॥
माधव! मारे मातु यदि, लात दुधमुँहे बालकूँ।
तो महेश! पदलिपटि शिशु, रोवै गहि माँ लालकूँ॥

(२७)

तव पद पदुम पराग मधुर द्रवअमृत बहावै।
मम मन लोलुप भ्रमर अनत कहु कैसे जावै॥
मधु जीवन आधार सार रस जानन हारो।
भ्रमर करत नितवास कमल तिहि एक सहारो॥
कहो कमल मकरन्द युत, तजि मधुव्रत जावै कहीं।
कंटकयुत दुरगंधमय, सुमन ओर निरखत नहीं॥

(२८)

त्वदंघ्रिमुद्दिश्य कदापि केनचित्—
यथातथावापि सकृत्कृतोऽञ्जलिः ।
तदैव मुष्णात्यशुभान्यशेषतः,
शुभानि पुष्णाति न जातु हीयते ॥

(२९)

उदीर्ण संसार दवांशुशुक्षणिम्
क्षणेन निर्वाप्य परां च निर्वृतिम् ।
प्रयच्छति त्वच्चरणारुणाम्बुज—
द्वयानुरागामृतसिन्धु शीकरः ॥

(३०)

विलासविक्रान्त परावरालयम्,
नमस्यदार्तिक्षपणे कृतक्षणम् ।
धनं मदीयं तव पादपङ्कजम्,
कदा नु साक्षात्करवाणि चक्षुषा ॥

(२८)

करि तव चरननि लक्ष्य भाव अथवा बिनु भावहुँ।
अंजलि शिर धरि नम्यो भले ही एक हि बारहुँ॥
कबहूँ काऊ समय भूल तैं अथवा प्रेरित।
पद प्रनाम ही करत मिटत दुख दुरित जनम शत॥
प्रभु प्रनाम परभाव तें, अघ सबरे नसि जात हैं।
शुभ मंगल नित नित बढ़त, घटत नहीं बढ़ि जात हैं॥

[२९]

अरुन वरन के उभय चरन कमलनि प्रेमामृत।
ता सागर को विन्दु परम सुखकर शीतल अति॥
भव वन अति ई गहन काम क्रोधादि दवानल।
ताको प्रबल प्रचंड वेगकूँ जो करि शीतल॥
छिन में देत बुझाइकें, हरै ताप संताप सब।
मिलै श्रेष्ठ सुख मोक्ष हू, होवै प्रभुपद प्रेम जब॥

(३०)

प्रभुपद पदुमनि प्रेम सहित हौं कब निरखुंगो।
मेरे धन सरवस्व निरखिकें कब हुलसुंगो॥
ऊपर नीचे लोक सकल लीला तैं नापत।
चरन कमल जो नमत भक्त तिनि सब दुख काटत॥
रूखो सूखो जग लख्यो, जिनि नयननि तैं दुःखकर।
कब अति शीतल सुखद शुभ, प्रभुपद निरखूँ विपतिहर॥

(३१)

कदा पुनः शंखरथाङ्गकल्पक—,
ध्वजारविन्दाङ्कुशवज्रलाञ्छनम् ।
त्रिविक्रम ! त्वच्चरणाम्बुजद्वयम्,
मदीय मूर्द्धानमलं करिष्यति ॥

(३२)

विराजमानोज्वलपीतवाससम्
स्मितातसीसून समामलच्छविम्,
निमग्ननाभिंतनुमध्यमुन्नतम्,
विशाल वक्षःस्थल शोभिलक्षणम् ॥

(३३)

चकासतं ज्याकिणकर्कशैः शुभैः,
चतुर्भिराजानुविलम्बिभिर्भुजैः ।
प्रियावतंसोत्पलकर्णभूषण—
श्रलथालकाबन्धविमर्दशंसिभिः ॥

(३१)

हे वामन भगवान ! अरुन पद पदुम तुम्हारे ।
त्रिभुवन लीयो नापि भक्तभय हरिवे बारे ॥
शंख चक्र अरु कमल कल्पतरु ध्वजा विराजें ।
जिनमें अंकुश वज्र चिन्ह वर शोभा राजें ॥
कब दोऊ वर पद कमल, मम शिर शोभा पाइँगे ।
होहिँ विभूषित मुकुटवत, भव संताप मिटाइँगे ॥

(३२)

श्री अंगनि में लसत उड़त उज्वल पीताम्बर ।
झिलिमिलि झिलिमिलि करत हरत अघ जे प्रपन्न नर॥
विकसित अलसी सुमन सरिस निरमल जिनि कान्ती ।
नाभि परम गंभीर निरखि हिय होवै शान्ती ॥
अति उदार कृश प्रभु उदर, वक्ष विशाल सुशोभि वर ।
कब नित करि कैंकर्य शुभ, हरषित होऊँ निरखि उर ॥

(३३)

जिनके भुज वर चारि जानुप र्यन्त विराजित ।
कमलसरिस अति मृदुल ठेक ज्या जामें शोभित॥
प्रिया-अंस अवतंस करन भूषन नीलोत्पल ।
केश पास के वन्ध करत ढीले कमलनि दल ॥
जे प्रपन्न तिनि सिर धरें, उनकूँ जो निरभय करें ।
कब नित तिनि कैंकर्य करि,सूखी मम आँखियाँ भरें ॥

(३४)

उदग्रपीनांसविलंविकुण्डला—
लकावलीबन्धुर कम्बुकन्धरम् ।
मुखश्रियान्यक्कृतपूर्णनिर्मला,
मृतांशुबिम्बाम्बुरुहोज्वलश्रियम् ॥

(३५)

प्रबुद्धमुग्धाम्बुज चारुलोचनम्,
सविभ्रमभ्रू लतमुज्वलाधरम् ।
शुचिस्मितं कोमलगण्डमुन्नसम्,
लालटपर्यन्त विलम्बितालकम् ॥

(३६)

स्फुरत्किरीटाङ्गदहारकण्ठिका—
मणीन्द्रकांचीगुणनूपुरादिभिः ।
रथाङ्गशंखासिगदाधनुर्वरैः
लसत्तुलस्या वनमालयोज्ज्वलम्

(३४)

अति उन्नत इसकंधदेशतक लटकत कुंडल ।
केश पास अति मृदुल करें भक्तनि हियनिरमल॥
शंख समान सुकंठ विराजे श्रीमुख जामें ।
दाणिम सम शुभ दंत पंक्ति विलसित वर तामें॥
पूरन निरमल चन्द्र छवि. करहिँ तिरस्कृत अंवुरुह ।
कब नित नित कैंकर्य करि, जीवन फल पाऊँ अहह ॥

(३५)

अम्बुज मुग्ध प्रबुद्ध चारु लोचन अनियारे ।
भौंह कमान समान लता सम आनन धारे ॥
उज्वल गुलगुल अधर कपोलहु कोमल प्यारे ।
मंद मंद मुसकान परम शुचि कच सटकारे ॥
उन्नत मस्तक नासिका, विखरी अलकावलि अमल ।
कब नित नब कैंकर्य करि, करूँ मनुज जीवन सफल॥

(३६)

उज्वल विमल किरीट हार अंगद तनु धारे ।
कण्ठा कौस्तुभ मनी करधनी कटिहिँ सम्हारे ॥
नूपुर करि झंकार प्रपन्ननि नित अघनासत ।
शंख चक्र असि गदा धनुष आयुध कर धारत ॥
बनमाला तुलसी गरे, घुटुअनि तक लम्बी विशद ।
कब नित नव कैंकर्य करि, मेंटूँ भव पथकी विपद ॥

(३७)

चकर्थ यस्या भवनं भुजान्तरम्—
तव प्रियं धाम यदीयजन्मभूः ।
जगत्समस्तं यदपाङ्गसंश्रयम्,
यदर्थमम्भोधिरमन्थ्यबन्धि च ॥

(३८)

स्ववैश्वरूप्येण सदानुभूतया—
प्यपूर्ववद्विस्मयमादधानया ।
गुणेन रूपेण विलासचेष्टितैः,
सदा तवैवोचितया तव श्रिया ॥

(३९)

तया सहासीनमनन्तभोगिनि—
प्रकृष्टविज्ञानबलैकधामनि,
फणामणिव्रात मयूखमंडल—
प्रकाशमानोदरदिव्यधामनि ॥

(३७)

वक्षस्थल में दयो वास लक्ष्मी कूँ जगपति ।
जनमभूमि ससुराल लगे तुमकूँ प्यारी अति॥
जिनिके कृपा कटाक्ष हेतु सब जग तरसतुहै ।
सो तव हिय नित बसति नेह जिनि नित्य बढ़तुहै॥
मथ्यो उदधि जिनि के निमित,पुनि तिनि हित बाँध्यो गयो।
कब तिनि सह कैंकर्य करि, जीवन फल पाऊँ नयो ॥

(३८)

प्रभो ! तुम्हारी प्रिया विश्वरूपी अनुभूती ।
नित नूतन सी लगति करति विस्मय भवभूती॥
लीला गुन सौंदर्य उचित तुमरे ई सम गुन ।
प्रेम भाव भरपूर मिली पतिनी नारायन ॥
जो सब गुन की खानि हैं, सुन्दरता जननी सुघर ।
कब तिनि सह कैंकर्य करि, पाऊँ जीवन विमलवर ॥

(३९)

तिनि लक्ष्मी के संग क्षीर सागर में निवसत ।
सहस फननि मनि दमकि शेष सैयापै सोवत ॥
बल विज्ञान निधान मनिनितैं करत प्रकाशित ।
दिव्यधाम अति दीप्त नागपै नाथ विराजित ॥
अरुनवरन कर कमल तैं, चरन कमल दाबत सिरी ।
करैं कृपा मोपै कबहुं जो अनंत ऊपर करी ॥

(४०)

निवासशय्यासनपादुकांशुको—
पधानवर्षातपवारणादिभिः ।
शरीरभेदैस्तवशेषतांगतैः,
यथोचितं शेष इतीरिते जनैः ॥

(४१)

दासः सखा वाहनमासनं ध्वजो—
यस्ते वितानं व्यजनं त्रयीमयः !
उपस्थितं तेन पुरो गरुत्मता,
त्वदंघ्रिसंमर्दकिणांकशोभिना ॥

(४२)

त्वदीयभुक्तोज्झितशेषभोजिना,
त्वया निसृष्टात्मभरेणयद्यथा !
प्रियेण सेनापतिना निवेदितत्,
तथानुजानन्तमुदारवीक्षणैः ॥

(४०)

शैया प्रभु की शेष शेष बनि जात निवासा ।
कबहूँ आसन बनैं पादुका बनि पगवासा ॥
दिव्य वस्त्र उपधान रूप तैं सेवा करि हरि ।
आतपत्र बनि छत्र करैं सेवा रूपनि धरि ॥
पाइ यथोचित शेषता, शयन शेष शैया करैं ।
देहिँ मोइ अवसर कबहुँ, सेवा लै भव दुख हरैं ॥

(४१)

गरुड़ तिहारे दास सखा वाहन वर आसन ।
ध्वजा चाँदनी व्यजन वेदमय जिनको शुभ तन॥
वाहन तिनहिँ बनाइ पीठ पै नाथ विराजत ।
लांछन कटि में भये रगड़ चरननि की लागत॥
संमुख समुपस्थित गरुड़, परै कृपा प्रभु कोर हू ।
कब नित नव कैंकर्य करि, चितवैं हरि मम ओर हू ॥

(४२)

तब प्रिय विष्वक्सेन चतुर सेनापति सेवक ।
प्रभु उच्छिष्ट प्रसाद पाइँ गुनवान अनिन्दक ॥
सौंपें जो-जो काम यथा विधि हाँ कहि मानें ।
उभय विभूति सम्हार करैं प्रभु सरबसु जानें ॥
तिनिकूँ मृदु मुस्कान युत, देत अनुज्ञा प्रानधन ।
कब नित नव कैंकर्य करि, अरपूँ निजतन प्रान मन ॥

(४३)

हताखिलक्लेशमलैः स्वभावतः,
त्वदानुकूल्यैकरसैस्तदोचितैः ।
गृहीततत्तत्परिचारसाधनैः,
निषेव्यमाणं सचिवैर्यथोचितम् ॥

(४४)

अपूर्वनानारसभावनिर्भर—
प्रबद्धया मुग्धविदग्धलीलया—
क्षणाणुवत्त्वित्तपरादिकालया,
प्रहर्षयन्तं महिषीं महाभुजम् ॥

(४५)

अचिन्त्यदिव्याद्भुतनित्ययौवन,
स्वभावलावण्यमयामृतोदधिम् !
श्रियः श्रियं भक्तजनैकजीवितम्,
समर्थमापत्सखमर्थिकल्पकम् ॥

(४३)

विष्वक्सेन अनन्त शेष सम सबई सेवक ।
सेवामें नित निरत नहीं तिनि तन मल पातक॥
जो स्वभाव तैं शुद्ध रहैं अनुकूल नाथ वश ।
नित नव करि कैंकर्य चखें अनुगत सेवा रस ॥
कर सेवा उप करन लै, सेवित सचिवनि यथोचित ।
कब ऐसो कैंकर्य करि, होऊँ अति मनमें मुदित ॥

(४४)

प्रिया संग प्रभु बसत हँसत अरु तिनहिँ हँसावत ।
नाना रस अरु भाव भरित सब काल बितावत॥
पर पूर्वार्ध समान काल छिन लव सम जामें ।
लीला करि अति मधुर प्रिया हित रस बरसामें ।
लक्ष्मी महिषी संगमें, महाबाहु पद पदुम धरि ।
करूँ सफल जीवन सकल, कब नित नव कैंकर्य करि ॥

(४५)

अमृत उदधि सम सुखद ललित लावण्य प्रकृतिवर।
अति अचिन्त्य शुचि दिव्य नित्य यौवन अद्भुततर॥
शोभा शोभित करें मंगलनिके मंगल अति ।
भक्तनि जीवन मूरि सरब समरथ प्रभु जगपति॥
अरथिनि के जो कलपतरु, विपद् सखा सबके सुहृद् ।
कब नित नव कैंकर्य करि, तजूँ सकल आपद विपद ॥

(४६)

भवन्तमेवानुचरन्निरन्तरम्,
प्रशान्तनिश्शेषमनोरथान्तरः ।
कदाहमैकान्तिकनित्यकिङ्करः,
प्रहर्षयिष्यामि सनाथजीवितः ॥

(४७)

धिगशुचिमविनीतं निर्दयं मामलज्जम्,
परमपुरुष ! योऽहं योगिवर्याग्रगण्यैः ।
विधिशिवसनकाद्यैर्ध्यातुमत्यन्तदूरम्,
तव परिजनभावं कामये कामवृत्तः ॥

(४८)

अपराधसहस्रभाजनम्
पतितंभीमभवार्णवोदरे ।
अगतिं शरणागतं हरे !
कृपया केवलमात्मसात्कुरु ॥

(४६)

अनुचर तुमरो प्रभो पार मोकूँ पहुँचाओ ।
करूँ सतत कैंकर्य मोइ माधव अपनाओ ॥
इच्छा होहिँ प्रशान्त मनोरथ रहें न मनमें ।
भूलूँ जग व्यवहार होहि आसक्ति न तनमें ॥
नित्य नियम कैंकर्य करि, जीवन होहि सनाथ सब ॥
प्रभु पद पदुमनि में पर्‌यो, हरषित होवै हियो कब ॥

(४७)

मोइ सतत धिक्कार माँग माँगी अति भारी ।
कहँ हौं अति ई अशुचि नीच निर्दय अघकारी॥
पापी अति अविनीत पतित निरलज्ज कहाऊँ ।
मन बानी तैं परे नाथ की सेवा चाहूँ ॥
विधि शिव सनकादिक अमल, योगीश्वर–ईश्वर सकल ।
ध्यान न मनहूँ तैं करें, चाहूँ तिनि कैंकर्य खल ॥

(४८)

अति अगनित अपराध पात्र हौं नाथ कहाऊँ ।
भव सागर अति भीम पर्‌यो तामें बिललाऊँ॥
शरनागत हौं अगति हरे ! मोकूँ अपनाओ ।
सब साधन तैं हीन दीनकूँ दरस दिखाओ॥
अन्य शरन दीसत नहीं, शरनागत पालक प्रभो ।
दीन द्वार क्रंदन करे, स्वीकारो सेवक विभो ॥

(४९)

अविवेकघनान्धदिङ्मुखे-
बहुधा सन्ततदुःखवर्षिणि ।
भगवन् भवदुर्दिने पथः—
स्खलितं मामवलोकयाच्युत !

(५०)

न मृषा परमार्थमेव मे—
शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।
यदि मे न दयिष्यसे ततो,
दयनीयस्तव नाथ ! दुर्लभः ॥

(५१)

तदहं त्वदृते न नाथवान्
मदृते त्वं दयनीयवान्न च ।
विधिनिर्मितमेतदन्वयं—
भगवन् ! पालय मास्म जीहपः ॥

(४९)

यह भव दुर्दिन सरिस घिरे घन बरसत पानी।
घन अविवेक महान अन्ध तम हौं अभिमानी॥
दुख बरसावत सतत भयंकर भव अति दुरदिन।
रपट्यो अच्युत पैर पतित हौं पर्‌यो अकिंचन॥
करो कृपा करुना अयन, भगवन् मोइ उठाइलें।
जानि अनाथ सनाथ करि, देखि दीन अपनाइलें॥

(५०)

बोलूँ नहीं असत्य सत्य इक बात बताऊँ।
बिनती मेरी सुनो दीन बनि तुम्हें सुनाऊँ॥
मो पै किरपा करो नहीं पीछे पछिताओ।
करो नहीं यदि दया नाथ दयनीय न पाओ॥
तुम सम दीनदयाल नहिँ, मो सम दीन न योग है।
दोऊ अति बेजोड़ हैं, भलो बन्यो संयोग है॥

(५१)

तुम सम जगमें नाथ दूसरो हौं नहिँ पाऊँ।
जो चाहें सो होइ और की शरन न जाऊँ॥
मो सम हूँ नहिँ मिलै तुम्हें दयनीय भिखारी।
लेउ प्रभो अपनाइ मानिलें बात हमारी॥
विधि निरमित यह योग है, पालन भगवन् करहु अब।
फिर पीछे पछिताउगे, निर्दय नाथ न बनहु अब॥

(५२)

वपुरादिषु योऽपि कोपि वा-
गुणतोऽसानि यथातथाविधः !
तदयं तवपादपद्मयो—
रहमद्यैव मयासमर्पितः ॥

(३५)

मम नाथ ! यदस्ति योस्म्यहं-
सकलं तद्धि तवैव माधव ।
नियतः स्वमिति प्रबुद्धधीः,
अथवाकिं नु समर्पयामि ते ॥

(५४)

अवबोधितवानिमां यथा—
मयिनित्यां भवदीयतां स्वयम् ।
कृपयैतदनन्यभोग्यतां
भगवन् भक्तिमपि प्रयच्छ मे ॥

(५२)

जैसो चाहें देह होहि चिन्ता नहिं स्वामी ।
कैसो हू गुन होहि अकामी अथवा कामी ॥
ये सब दैव अधीन समल होऊँ या निरमल ।
बल जग में नहिं और तुम्हारो ई मोकूँ बल॥
मम सम्पति इक 'अहम' है, ताहि अबहिं अरपित करूँ ।
अपनो सरबसु सौंपिके, चरन कमल में गिरि परूँ ॥

(५३)

अथवा सोचूँ नाथ ! बात इक अन्तरयामी ।
मेरो तो कछु नाहिं आपु सरबसु के स्वामी ।
'अहं' तुम्हारी वस्तु ताहि फिरि देऊँ कैसे ॥
गंगाको ई नीर देइ सुरसरि कूँ जैसे ॥
जो कछु जग में वस्तु है. धन संपति वैभव सकल ।
करता धरता गृहीता, दाता तुम स्वामी विमल ॥

(५४)

भगवन् ! मम कछु नाहिं बात तुमने समुझाई ।
प्रभु अनुकम्पा करी बुद्धि यह बात समाई ॥
जैसे दीयो ज्ञान भक्ति अनपायिनि देवें ।
ह्वै कें सतत अनन्य पाद प्रभु के नित सेवें ॥
भक्ति भावना जगे हिय, तब सब कछु मिलि जाइगो ।
सूख्यो हिय जग विषय तैं, भक्ति पाइ हरियाइगो ॥

(५५)

तव दास्यसुखैकसंगिनां —
भवनेष्वस्त्वपि कीटजन्म मे ।
इतरावमथेषु मास्मभूत्–
अपि मे जन्म चतुर्मुखात्मना ॥

(५६)

सकृत्त्वदाकारविलोकनाशया—
तृणीकृतानुत्तमभुक्ति मुक्तिभिः ।
महात्मभिर्मामवलोक्यातां नय,
क्षणेऽपि ते यद्विरहोऽतिदुः सहः ॥

(५७)

न देहं न प्राणान्न च सुखमशेषाभिलषितम्,
न चात्मानं नान्यत् किमपि तव शेषत्वविभवात् ।
बहिर्भूतं नाथ ! क्षणमपि सहे यातु शतधा,
विनाशं तत्सत्यं मधुमथन ! विज्ञापनमिदम् ॥

(५५)

जो अनन्य हैं दास तुम्हें ई सरबसु जानें।
तव प्रपत्ति कूँ छोड़ि अन्य साधन नहिं मानें॥
उनके भवननि कीट बनूँ तहँ अति सुख पाऊँ।
कैसे हूँ तिनि संग मिलै अतिशय हरसाऊँ॥
दास्य भाव तैं जे विमुख, तिनि घर बनिकें चतुरमुख।
कबहूँ जनम न देहिं प्रभु, तव सेवा बिनु कहाँ सुख॥

(५६)

मोपै कृपा कटाच्छ करैं हरि भक्त अमानी।
तृन सम समुझत विभव मोच्छ सेवारुचि मानी॥
सरबसु देवैं बारि सकृत् आकार बिलोकन।
वे मोकूँ लखि लेइँ करौं हौं तिनि पद सेवन॥
औरनि की तो बात का, छिन भर कूँ उनको विरह।
प्रभु कूँ होहि असह्य अति, कृपा करैं मोपै अहह॥

(५७)

हे माधव! मधुमथन! सुनो विज्ञापन भगवन्।
विभो रहित शेषत्व विभव चाहूँ नहिं तन धन॥
तातें विरहित प्रान आतमा सुख नहिं चाहूँ।
उभयलोक ऐश्वर्य न चाहूँ नाथ सुनाऊँ॥
चूर चूर ह्वै जायँ सब, का इनतैं मम काम है।
यह विज्ञापन सत्य प्रभु, भक्तवछल तव नाम है॥

(५८)

दुरन्तस्यानादेरपरिहरणीयस्य महतः,
निहीनाचारोऽहं नृपशुरशुभस्यास्पदमपि ।
दयासिन्धोः बन्धोः निरवधिकवात्सल्यजलधे,
तव स्मारं स्मारं गुणगणमितीच्छामि गतभीः॥

(५९)

अनिच्छन्नप्येवं यदि पुनरितीच्छन्निवरजः--
तमश्छन्नच्छद्मस्तुतिवचनभंगीमरचयम् ।
तथापीत्थं रूपं वचनमवलम्ब्यापि कृपया,
त्वमेवैवं भूतं धरणिधर ! मे शिक्षय मनः ॥

(६०)

पिता त्वं माता त्वं दयिततनयस्त्वं प्रियसुहृत्--
त्वमेव त्वं मित्रं गुरुरसि गतिश्चासि जगताम् ।
त्वदीयस्त्वद्भृत्यस्तव परिजनस्त्वद्गतिरहम्--
प्रपन्नश्चैवं सत्यहमपि तवैवास्मि हि भरः ।

(५८)

दयासिन्धु हे दीन बन्धु हौं नर पशु पापी।
अति ई क्षुद्र मलीन अशुचि पामर संतापी॥
जिनिको नहिँ परिहार करूँ पातक सो भारी।
तव गुनगन कल्यान सुमिरि मागूँ मधुहारी॥
निरभय ह्वै शेषत्व की, करूँ याचना प्रभु निकट।
वत्सलता सागर अगम! मम विज्ञापन अति विकट।

(५९)

बिनु इच्छा ई नाथ कपट इस्तुति हौं भाखी।
हौं रज तम तैं छन्न धरनिधर! तुम ई साखी।
इस्तुति मैंने करी झूठ सच तुम ई जानो।
जैसी जो कछु करी ताहि अबलंबन मानो॥
कृपा करो करुना उदधि, मम मन कूँ शिक्षा करो।
अघमति कपटी जानि कें, अब केशव किरपा करो॥

(६०)

जगके तुम पितु मातु दयित सुत सुहृदहु प्यारे।
तुम प्राणाधिक मित्र पूज्य गुरुदेव हमारे॥
गति हो दीन दयालु तुम्हारो सेवक स्वामिन्।
किंकर हूँ लघु भृत्य आप ही गति मम भगवन्॥
हौं प्रपन्न तव शरन हूँ, सब विधि साधनहीन हूँ।
शरनागत पालक तुमहु, करो भरन अति दीन हूँ॥

(६१)

जनित्वाहं वंशे महति जगति ख्यातयशसाम्,
शुचीनां युक्तानां गुणपुरुषतत्वस्थितिविदाम् ।
निसर्गादेवत्वच्चरणकमलैकान्तमनसाम्,
अधोधःपापात्मा शरणद! निमज्जामि तमसि॥

(६२)

अमर्यादः क्षुद्रश्चलमतिरसूयाप्रसवभूः,
कृतघ्नो दुर्मानी स्मरपरवशो वञ्चनपरः ।
नृशंसः पापिष्ठः कथमहमितो दुःखजलधेः,
अपारादुत्तीर्णस्तव परिचरेयं चरणयोः ॥

(६३)

रघुवर ! यदभूस्त्वं तादृशो वायसस्य,
प्रणत इति दयालुर्यच्च चैद्यस्य कृष्ण ।
प्रतिभवमपराधाद्धुमुग्ध!सायुज्यदोभूः,
वद किमुपदमागस्तस्य तेऽस्ति क्षमायाः ॥

(६१)

जनम्यो हौं विख्यात वंश जग कीरति छाई।
शुचि अति योगी परम संत जिहि करत बड़ाई॥
जो जानत गुन तत्व पुरुष इस्थिति कूँ समुचित।
तव पद पदुमनि मग्न रहै निशदिन ही जिनि चित॥
ऐसे नाथ मुनीन्द्रकुल, जनम्यो, फिरि हू पाप मति।
डूबत हूँ अज्ञान तम, नाथ बचावैं तुरत अति॥

(६२)

हौं पापी अति क्षुद्र नहीं मर्यादित जीवन।
निन्दक वञ्चक अधम कृतघ्नी चलमति दुरजन॥ ;
वञ्चक अति निरसंस कामरत प्रभु दुरमानी।
कहँ तक भगवन् कहूँ, सकल अवगुनगन खानी॥
दुग्ध अपार संसार तैं, पार जाउँ कैसे प्रभो।
कैसे तव पद पदुम की, परिचरिया पाऊँ विभो॥

(६३)

रघुवर! सुरपति-तनय काक वपु धरिकें आयो।
माँ सीता करि व्यथित भग्यो सर नाथ चलायो॥
शरनागत लखि छम्यो दया करि सो अपनायो।
दई मुक्ति शिशुपाल पातकी मुक्त बनायो॥
छिमा जाइ नहिँ करि सको, ऐसो का अपराध प्रभु।
हे मेरे भोरे दयित, जाकूँ देउ बताइ विभु।

(६४)

ननु प्रपन्नः सकृदेव नाथ!
तवाहस्मीति च याचमानः।
तवानुकम्प्य स्मरतः प्रतिज्ञाम्,
मदेकवर्जं किमिदं व्रतं ते॥

(६५)

अकृत्रिमत्वच्चरणारविन्द—
प्रेमप्रकर्षावधिमात्मवन्तम्।
पितामहं नाथमुनिं विलोक्य,
प्रसीदमद्वृत्तमचिन्तयित्वा॥

इति आलवन्दार (स्तोत्ररत्न) समाप्त

यत्पदाम्भोरुहध्यानविध्वस्ताशेषकल्मषः।
वस्तुतामुपयातोऽहं यामुनेयं नमामि तम्॥

(६४)

बार बार प्रभु कही सकृत शरनागत होवै ।
मैं तेरो हूँ नाथ कहे मम आगे रोवै ॥
सब भूतनि तैं अभय करूँ मेरो यह व्रत है ।
करें प्रतिज्ञा सत्य वीर कूँ यही उचित हैं ॥
करो नहीं मोकूँ अभय, नहिँ निज व्रत पालन करत ।
केवल मोकूँ छोंड़िकें, का तुमरो है नाथ व्रत ॥

[६५]

मम अवगुन नहिँ लखो कुकरमनिकूँ मति पेखो।
पूज्य पितामह नाथ मुनीश्वर कूँ प्रभु देखो ॥
आत्मतत्व के विज्ञ मुनीश्वर योगी भारी ।
चरन कमल तव भक्त प्रेम के जो अधिकारी ॥
उन मुनिवर को पौत्र है, यों सम्बन्ध लगाइलें ।
महामहिम सम्बन्ध तैं, मोइ नाथ अपनाइलें ॥

इति आलवन्दार स्तोत्र (स्तोत्ररत्न) समाप्त

करूँ नमन यामुन चरन, कल्मष कटत अशेष ।
जिनि पद पंकज ध्यानतैं,हौं शुचि भयो अक्लेश॥

हिन्दू धर्म और हिन्दी—साहित्य का युगान्तकारी
धार्मिक प्रकाशन

भागवती कथा

देशके विभिन्न विद्वानों नेताओं और पत्रकारों द्वारा
भूरि-भूरि प्रशंसित। इसके लेखक हैं।
श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी

१—श्रीमद्भागवत तथा अन्यान्य पुराणों की कथाओं का रहस्य सरलता सरसता और घरेलू ढङ्ग से समझेंगे।
२—दैनिक जीवन को सात्विक, धार्मिक और राष्ट्रीय जीवन की सार्थकता में परिणत करेंगे।
३—व्यवहारिक या गार्हस्थ्य जीवन को जीने के लिये नहीं, जीवनके लिये इसके पठनसे उसे उच्च और धार्मिक बनायेंगे।
३—श्रेय और प्रेय. योग और भोग एक साथ सम्पादन करने—प्राप्त करने—की शिक्षा घर बैठे प्राप्त करेंगे।
५—जननी जन्मभूमि की महत्ता को समझकर स्वधर्म, स्ववर्ण, स्ववेश, तथा स्वदेश के प्रति निष्ठावान् बनेंगे।

इस अभूत-पूर्व ग्रन्थ में १०८ भाग होंगे।

प्रति मास एक भाग प्रकाशित करने की योजना चल रही है। अब तक ६८भागछप चुके हैं। ६९ वां खंड छप रहा है,शीघ्र प्रकाशित होगा। प्रायः २५० पृष्ठों के प्रत्येक सचित्र भाग की दक्षिणा केवल १,२५ न० पै० है।

१७,३० न० पै० अग्रिम वार्षिक प्रदान करने पर १२ भाग बिना डाकव्यय के आपके घर रजिष्ट्री से पहुंच जायँगे।

प्राप्तिस्थान—

संकीर्तन भवन, झूसी (प्रयाग)

कीर्तनीयो सदा हरिः

सचित्र

भागवत चरित

(सप्ताह)

रचयिता—श्री प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी

श्रीमद्भागवत के १२ स्कन्धों को भागवत सप्ताह के क्रमसे ७ भागों में बाँट कर पूरी कथा छप्पय छन्दों में वर्णन की है। श्री मद्भागवत की भाँति इसके भी साप्ताहिक, पाक्षिक तथा मासिक पारायण होते हैं। सैकड़ों भागवतचरित व्यास बाजे तबले पर इसकी कथा कहते हैं। लगभग हजार पृष्ठ की सचित्र कपड़े की सुदृढ़ जिल्द की पुस्तक की न्योछावर ५।) मात्र है। थोड़े ही समय में इसके १८००० के ४ संस्करण छप चुके हैं। ५ हजार का पाँचवाँ संस्करण छप रहा है। दो खंडों में हिन्दी टीका सहित भी छप रही है। प्रथमखंड प्रकाशित होचुका है। उसकी न्योछावर ६) हैं दोनों सटीक खंडों की न्योछावर १२) है।

नोट—हमारी पुस्तकें समस्त संकीर्तन भवनों में मिलती हैं

पता—संकीर्तनभवन, झूसी (प्रयाग)

॥ श्रहरिः ॥

श्रीब्रह्मचारी जी द्वारा लिखित चार नई पुस्तकें

१—सटीक भागवत चरित

टीकाकार–श्री पं० रामानुज जी पांडेय बी० ए० विशारद भागवत चरित व्यास, छप्पय छदों में लिखित श्री भागवतचरित को धार्मिक जनता का लोक प्रिय नित्य पाठ का ग्रन्थ बन गया है ४ संस्करणों में इसकी १८ हजार प्रतियां छप चुकी हैं ५ वें संस्करण की ५ हजार छप रही हैं। इसको दो खंडों सरलटीका सहित छापा है। प्रत्येक खंड की न्यौछावर ६) दोनों खंड की १२)

२—मुक्तिनाथ दर्शन

श्री ब्रह्मचारी जी ने मुक्तिनाथ की यात्रा की थी, उसका इसमें सजीव वर्णन हैं, पौराणिक कथायें हैं पृष्ठ सं० २६४ की न्योछावर २॥) मात्र है।

३—गोपलन-शिक्षा

गौ कैसे पालनी चाहिये इसका इसमें विस्तृत वर्णन है। ६४ पृष्ठों में पशुओं के रोगों की औषधि है। पृष्ठ सं० २०४ की न्यौछावर २) मात्र

४—आलवन्दार स्तोत्र

आपके हाथ में ही है पृष्ठ सं० ५६ न्यौ० २५ पैसे

भागवती कथा के ६८ और ७० खंड प्रेस में छप रहे हैं ६९ वां छप गया ७० वां छपने वाला है। प्रत्येक खंड की न्यौछावर १।) है डाक व्यय पृथक्

पता–संकीर्तन भवन, झूसी (प्रयाग)

❀ श्रीहरिः ❀

श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी द्वारा लिखित अन्य पुस्तकें

१–भागवती कथा(१०८ खंडोंमें)६८ खंड छप चुके हैं। प्रति खंड का मूल्य १,२५ पै० ७५. पै० डाकव्यय पृथक्, ६९ वाँ(प्रेस में)
२–श्रीभागवत चरित–लगभग ९०० पृष्ठ की, सजिल्द मू० ५.२५
३–बदरीनाथ दर्शन—बदरी-यात्रा पर खोजपूर्ण महाग्रन्थ मू०४.
४–महात्मा कर्ण–शिक्षाप्रद रोचक जीवन,पृ०सं० ३५६,मू० २.७५
५–मतवारी मीरा—भक्ति का सजीव साकार स्वरूप मू० २.
६–नाम सङ्कीर्तन-महिमा–भगवन्नाम का युक्तियुक्तपूर्ण मू० .५०
७–श्रीशुक—श्रीशुकदेव जी के जीवन झाँकी (नाटक) मू० .५०
८–भागवती कथा की बानगी—पृष्ठ सं० १००, मू० .२५
९–शोक शांति–शोक की शांति करने वाला रोचक पत्र मू० .३१
१०–मेरेमहामना मालवीय–उनके सुखद संस्मरण,पृष्ठ १३०मू०.२५
११–भारतीय संस्कृति और शुद्धि—क्या अहिन्दू हिन्दू बन सकते हैं ? इसका शास्त्रीय विवेचन पृष्ठ ७६ मू० .३१
१२–प्रयाग माहात्म्य मू० .१०
१३–वृन्दावन माहात्म्य मू० .८
१४–राघवेन्दु चरित–भागवतचरित से ही पृथक् छापा गया है.३१
१५–प्रभुपूजापद्धति—पूजा करने की सरल शास्त्रीय विधि .१९
१६–श्रीचैतन्य चरितावली—५ खण्डों में प्रथम खण्ड का मू० १.
१७–भागवत चरित की बानगी— मू० .२५
८१–गोविन्द दामोदर शरणागत स्तोत्र—(छप्पय छन्दों में) .१५
१९–गोपीगीत–(मूल तथा हिन्दी पद्य सहित) अमूल्य ।
२०–श्रीकृष्ण-चरित–भागवतचरित से ही पृथक् छापा गया है २.
२१–रासपञ्चाध्यायी—रास के पांच अध्याय पृ० ६४ अमूल्य
२२–गोपालन-शिक्षा—गो कैसे पाली जाय, मू० २.
२३–मुक्तिनाथ दर्शन—मुक्तिनाथ यात्रा का सरसवर्णन मू० २॥
२४–आलवन्दार स्तोत्र-(छप्पय सहित) मू० .२५